International Journal of Multidisciplinary Allied Research Review and Practices
IJMARRP ISSN No: 2455-1570 (Volume 3, Issue 4, April 2016)

रवीन्द्र नाथ टैगोर द्वारा भारतीय शिक्षा व हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में नवाचार

डॉ. रफीक,सहायक प्रोफेसर (हिन्दी विभाग)
राजकीय महाविद्यालय, नगीना जिला मेवात, हरियाणा

"जिन शिक्षको के भीतर का मानव सूख कर काठ को गया है व बच्चों की जिम्मेदारी उठाने के योग्य नहीं है।"

रवीन्द्र नाथ टैगोर

सम्पूर्ण विश्व इस समय अनूठे तनाव, अंशांति और बेईमानी के दौर से गुजर रहा है। अमेरिका जो शिक्षा के विस्तार का प्रमाण है, वह सबसे ज्यादा भय और तनावग्रस्त है। अमेरिका में बच्चे बस्तों में रिवाल्वर लेकर स्कूल जाते है और उन्हें अपने सहपाठियों व शिक्षकों की हत्या करने में आनंद आता है। विश्व में अशांति की गहरी कालिमा दसों दिशाओं मे व्याप्त हो गई है। इससे निश्चित ही कहा जा सकता है कि हमारी शिक्षा में गडबड जरूर है। इस समय शोषण, सेवा की ओट में खडा है। हिंसा, अहिंसा का मुखौटा पहने ताण्डव नृत्य कर रही है। विकृतियों ने संस्कृति के वस्त्रा पहने हुए हैं। शिक्षा के नाम पर जिन परतन्त्राताओं का पोषण किया जा रहा है उसमें एक स्वतंत्रा और स्वस्थ इंसान का जन्म कतई संभव नहीं है। व्यक्ति, समाज, देश, विश्व आदि एक गहरे–गहरे विद्रूप स्याह समुद्र का रूप लेते जा रहे है। निश्चय ही हमारी शिक्षा में भारी गडबड है। शांति हमारा मूल आधार है। मानव मात्रा और इस सृष्टि में आनंद के लिए शांति पहली शर्त है। शांति की बुनियाद पर ही हमारा जीवन कर्म खडा होना चाहिए। शिक्षा का मूल मंत्रा शांति के अलावा अन्य कुछ नहीं होना चाहिए। किंतु शिक्षा ने तो दी है स्मृति। शिक्षा ने दी है अशांति। विवेक व शांति शिक्षा के मूल एजेण्डे से कही दूर चले गए हैं।

'किसी देश का भविष्य जानना हो तो मनीषियों के पास जाने की आवश्यकता नहीं, उस राष्ट्र के बच्चों की आंखों में देखने से ही सारी जानकारी मिल जायेगी। अगर बच्चों की आंखों में आशा, हिम्मत सेवा की भावना व चुस्ती है तो देश का भविष्य निश्चित रूप से उज्ज्वल होगा, लेकिन उसकी नजरों में मायूसी, खुदगर्जी और ढीलापन है तो वह देश कभी ऊँचा नहीं उठा सकता।'

प्रस्तुत कथन के परिप्रेक्ष्य में अपने देश की स्थिति को देखा जाये तो हम आज बहुत सकारात्मक स्थिति में नहीं है। मूल्य विहीन शिक्षा और आचरण हीन परीक्षा पद्धति विद्यार्थियों में निराशा उत्पन्न करती है। लक्ष्य विहीन उपाधियां उनके जीवन में आलस्य उत्पन्न करती है। प्रान्तीय स्तर की परीक्षाएं हो या

राष्ट्रीय स्तर की परीक्षाएं विवादों से अछूती नहीं। अंक आधारित ये परीक्षाएं व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं गुणों की पहचान किये बिना व्यर्थ सी प्रतीत होती है। विद्यार्थियों के आन्तरिक एवं स्वभाविक गुण सच्चाई, ईमानदारी, स्वच्छता, निष्पक्षता, मृदुता, संवेदनशीलता, कर्तव्यपरायणता, तत्परता, समय–पालन इत्यादि गुणों का विकास शिक्षा का मूल स्वभाव होना चाहिए। मानवीय इन गुणों के अभाव में शिक्षा मात्रा कुछ शब्द या गणितीय संक्रियाएं मात्रा है। इन शब्दों एवं गणितीय संक्रियाओं का मानव जीवन में कोई अधिक महत्व नहीं, कोई उपादेयता नहीं।

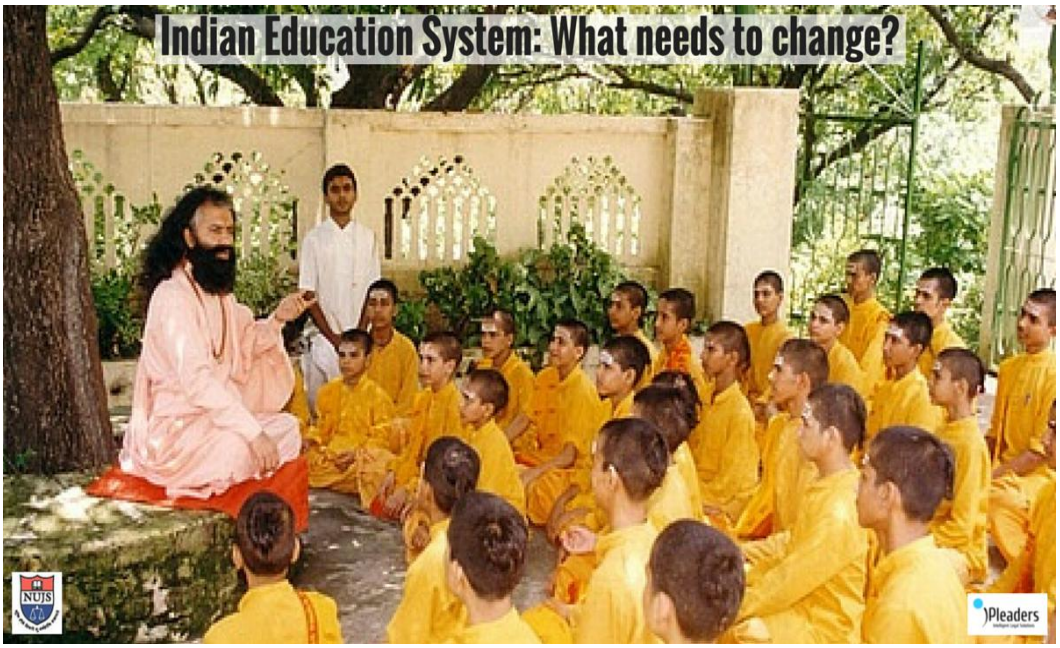

राष्ट्र या मानव के दिशा–बोध के लिए उन लोगों का मार्गदर्शन स्वीकारना पडता है, जो स्वयं मार्ग पर चलकर उसकी जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। अपने पथ का अनुसंधान कर चुके है। उनको गुरू या आचार्य कहा जाता है। गुरू इसलिए कि उनमें ज्ञान की गरिमा भरी होती है। आचार्य इसलिए कहा जाता है कि आचरण की शिक्षा देते है। वे स्वयं सदाचारी होते है और चाहते है कि समाज में भी सभी सदाचारी बने। समाज नैतिक एवं सदाचारी बने इस हेतु प्राथमिक शिक्षा से ही प्रयत्न करने होंगे। प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थी स्वच्छता, सत्य, ईमानदारी, समयपालन एवं आपसी सहयोग सीख जायें एवं इन गुणों को व्यवहार में लाना सीख जायें तो समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन आ सकते है। भाषा एवं आचरण के माध्यम से इन गुणों की शिक्षा का परिचय दिया जा सकता है।

माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों में आस्था, विश्वास, त्याग, समर्पण, उदारता, निर्भयता, कर्तव्य परायणता इत्यादि गुणों का विकास किया जाएं। इन गुणों से युक्त विद्यार्थी ही एक अच्छे समाज व राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं।

शिक्षा में नवाचारों (सतत एवं व्यापक मूल्यांकन) को प्राथमिक विद्यालयों में लागू किया जा रहा है। इन नवाचारों का मन्तव्य भी यही है। विद्यार्थियों के व्यापक मूल्यांकन के अनुसार उनके शैक्षिक मूल्यांकन के साथ–साथ उनके मानवीय गुणों का भी मूल्यांकन हो। राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा 2005 (एनसीएफ 2005) के अनुरूप भी एक श्रेष्ठ व्यक्ति का निर्माण मानवीय गुणों के विकास से संभव हो सकता है। इसके लिए अच्छा पाठ्यक्रम और श्रेष्ठ शिक्षकों की आवश्यकता है।

शिक्षा का उद्देश्य व्यवहारगत परिवर्तन है। शिक्षा के द्वारा ही श्रेष्ठ व्यक्तित्वों का निर्माण संभव है। श्रेष्ठ व्यक्तित्वों से ही अच्छा समाज एवं राष्ट्र का नव निर्माण संभव है। जापान, इजराइल, वियतनाम, सिंगापुर जैसे छोटे–छोटे देशों ने आज संसार में अपना अस्तित्व अपने बलबूते पर बनाया है। इन राष्ट्रो के नागरिकों में राष्ट्रीय भावना व नैतिक शिक्षा ने ही श्रेष्ठ व्यक्तित्वों को जन्म दिया है। आओ हम मिलकर संकल्प ले स्वयं नैतिक बने एवं भावी पीढी को नैतिक एवं चरित्रावान् बनाएं। 'एकोऽहं बहु स्याम' के संकल्प ने सृष्टि को जन्म दिया। हमारा संकल्प नीतिवान् भारत को जन्म देगा। भारत की समस्त बुराइयों को दूर करने का एक मात्रा यही उपाय है।

सर्जनशीलता –

मनुष्य की विचारशीलता व सर्जनशीलता के गुण ही उसे अन्य प्राणियों की श्रेणी से पृथक करते है। अपनी जिज्ञासा करने, घटनाओं के बीच कार्य कारण संबंध को समझ सकने तथा अपनी कल्पनाशीलता का प्रयोग कर नए प्रकार की रचना कर सकने की क्षमता के कारण ही मनुष्य अपनी संस्कृति को इतना विकसित कर सका है।

यह तर्कपूर्ण सोच–विचार कर सकने की शक्ति और नित नया रच सकने वाली सर्जनशीलता ही मनुष्य को वह आवश्यक ऊर्जा उपलब्ध कराती है जो उसके समाज को निरन्तर गतिमान बनाए रखने के लिए आवश्यक है। मनुष्य जिस पर्यावरण में रहता है, वहां की वस्तुओं एवं घटनाओं से वह प्रभावित होता है और उनको प्रभावित करने की कोशिश करता है। इस क्रिया प्रतिक्रिया में उसके भीतर कई अनुभव एवं भावनाएं विकसित होती है। एक स्थिति के पश्चात वह इन व्यक्तिगत अनुभवों को अभिव्यक्त कर कुछ नया सर्जित करने की इच्छा अपने भीतर पाता है। नवीन विचारों की यह अभिव्यक्ति सर्जनशीलता कहलाती है।

सर्जनशीलता क्या है ?

सर्जनशीलता एक नवीन विचार है जो व्यावहारिक, सार्थक एवं उपयोगी हो। प्रत्येक कार्य में हम पुराने संबंध जोडते हैं पुराने आकारों में नए आकारों की स्थापना करते हैं। इस प्रकार सर्जनशीहलता नवीन संबंधों को जानना आर उन्हें अभिव्यक्त करना है। सर्जनशील विचार नवीन, अन्वेषणात्मक एवं साहिसिक होते है जैसे –

– **वैज्ञानिक सर्जनशीलता** – अमूर्त विचार से सिद्धान्त बनाना (न्यूटन का सिद्धांत)

– **कलात्मक सर्जनशीलता** – भाव अभिव्यक्ति (मुहावरे, विज्ञापन, कार्टून, पेटिंग बनाना)

– **विस्तारित सर्जनशीलता** – विचारों का फैलाव (उपन्यास, फिल्म, कहानी)

अनुकरण में सर्जन नहीं है, सर्जन नकल में नहीं है। बनावटी उत्साह के नशे में किया गया सर्जन सच्चा सर्जन नहीं कहलाता। जब आंतरिक उमंग से मानों अंतर को ही खाली करने का व्यक्त करने के लिए अन्तर्मन स्वयं प्रकट हो जाता है, वही सर्जन कहलाता है। इस प्रकार का सर्जन काव्य के, संगीत के, चित्र के अथवा किसी भी ललित कला के माध्यम से प्रकट होता है। सर्जन स्वतंत्रता की देन है। जब सर्जन स्वयं स्फूर्त होता है, जब सर्जन स्वानुभव से उपजता है, जब सर्जन आत्मसाक्षात्कार के लिए होता है, तभी वह सच्चा सर्जन कहलाता है।

सर्जनशीलता की तकनीकी सीखना आवश्यक है। यह एक आदत की तरह है। प्रश्न करने की आदत और किसी भी समस्या को अलग–अलग परिप्रेक्ष्य में देखना सर्जनशीलता के लक्षण है। सर्जनशील व्यक्ति प्रत्येक घटनाक्रम को नए तरीकों से देखता व जांचता है।

सर्जनशीलता तरीके से विचार दो प्रकार से किया जाता है –

1. अपसारित विचार (DIVERGENT THINKING)

2. अभिारित विचार (CONVERGENT THINKING)

पहले प्रकार के एक बिन्दु पर विभिन्न विचार उत्पन्न होते है। जब किसी समस्या का निश्चित समाधान उपलब्ध न हो तो व्यक्ति उसके वैकल्पिक समाधान सोचता है। इस एक समस्या से वैकल्पिक विचारों का उत्पन्न होना ही अपसारित सोच (क्प्टम्त्ळम्छ्ज ज्भ्प्छ्ज्ञ्प्छ्ळ) कहलाता है। जैसे – अगर सारे समुद्र जमीन हो जाएं तो? अथवा अगर शादी के समय ईंधन न मिले तो?

दूसरे प्रकार के बहुत सारे विचारों से एक निष्कर्ष की ओर पहुंचना होता है। जब किसी समस्या का एक ही निश्चित समाधान उपलबध न होने पर विभिन्न प्रकार के जो विकल्प मन में आएं उनमें से परिस्थिति के अनुसार एक समाधान की ओर बढ़ना अभिसारित सोच (CONVERGENT THINKING) कहलाता है। जैसे – आग जललाने के लिए हमारे

पास कई विकल्प संभव हो सकते है– पत्थर, माचिस व लाइटर। इन विकल्पनों में से परिस्थिति के अनुसार किसी एक विकल्प का चुनना अभिसारित सोच है।

सर्जनशीलता के लिए दोनों तरह के विचार करना बहजुत आवश्यक है। किसी भी नई समस्या पर पहले अपसारित सोच (DIVERGENT THINKING) फिर अभिसारित सोच (CONVERGENT THINKING) करना ठीक रहता है। जिन लोगों की ब्छटम्त्लम्छज ज्भ्प्छज्ञप्छळ एवं (DIVERGENT THINKING) गहरी एवं संगतियुक्त होती हैं वे व्यति प्रबुद्ध समझे जाते है।

सर्जनशीलता बढाने के प्रमुख तत्व –

– असफलता के डर व अपनी कुण्ठाओं और पूर्वाग्रहों को समाप्त करना तथा सामूहिक से व्यक्तिगत सर्जनशीलता की ओर बढना होगा।

– जिज्ञासु वातावरण का निर्माण करना और हमेशा वैकल्पिक विचार रखने होंगे।

– स्वस्थ प्रतिस्पर्धात्मक एवं चुनौतीयुक्त वातावरण बनाना होगा।

– अकेलापन तोड़ने हेतु विविधता युक्त वातावरण रखना होगा।

– अभ्यस्तता (रूटीन) अथवा मैकेनिज्म (मशीनीकृत) तोडना होगा।

सर्जनात्मकता एवं सामाजिक विकास –

स्वतंत्रता संग्राम के लिए छेडी गई मुहिम सर्जनशीलता का एक अच्छा उदाहरण है। गांधीजी ने अपने नए सर्जन किए हुए विचारों से कई मुद्दों जैसे – अस्पृश्यता निवारण, सर्व धर्म समभाव, अहिंसा आदि से स्वतंत्रता आंदोलन को सफल बनाया। सर्जनशीलता की अवधारण कवि एवं कलाकार के लिए अलग–अलग होती है परन्तु व्यापकता के संदर्भ में इसका महत्व सामाजिक विकास में भी है।

जिन समाजों के व्यक्ति चुनौती स्वीकारते है और उनका मुकाबला करते हैं, वे ही अपनी सर्जनशीलता को जगा पाते हैं और समाज में उन्नति में सहायक होते है। सर्जनशीलता से संस्कृति व समाज में परिवर्तन घटित होते है। सर्जनशीलता भी सांस्कृतिक, सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होती है। जिन समाजों में विचारों की स्वतंत्रता हो, पर्याप्त साधन हो और सामाजिक मूल्य नवीन विचारों को स्वीकृति देते हो उस समाज के विकास के अधिक अवसर होते है। कभी कभी अपनी यथास्थिति से असन्तोष भी सर्जनशीलता को जन्म देता है यह असन्तोष चार प्रकार के लोगों में देखा जा सकता है –

– उन व्यक्तियों में जो समाज का रूढिगत व्यवहार स्वीकार नहीं कर पाते हैं।

– कुछ लोगों का परम्परागत व्यवहार से लगाव नहीं होता है।

– कुछ व्यक्ति पहले तो परम्परागत व्यवहारों से लगाव रखते है, किन्तु अनुभव उन्हें परम्परा के विरूद्ध कर देता है।

– वे व्यक्ति जो परम्पराओं से हटकर ही जीवन में उच्च उपलब्धियों की संभावना देखते हैं, ऐसे व्यक्ति सर्जनशील तरीकों से उन उपलब्धियों की नई संभावनाएं खोजते हैं।

व्यक्तियों की मानसिक असंतुष्टि सर्जनात्मक विचारों के आने और उन्हें स्वीकार करने की ओर प्रेरित करती है। इसके अतिरिक्त नवीनता का समर्थन करने वाले का व्यक्तित्व एवं इस ''नवीनता'' का सामजिक महत्व भी सर्जनशीलता की स्वीकृति को प्रभावित करता है।

सर्जनशीलता की चार प्रमुख विशेषताएं हैं –

– सर्जनशीलता को कोई भी समाज उसी दशा में स्वीकार करता है जबकि वह उसके लिए लाभप्रद हो।

– सर्जनशीलता एक सचेत प्रक्रिया है अर्थात् किसी भी समाज में नवीन परिवर्तन जान बूझकर प्रयत्नपूर्वक लाया जाता है।

– एक समाज द्वारा सर्जनशीलता अपनाने पर दूसरा भी उससे प्रभावित होता है उसे परिवर्तित या संशोधित रूप में स्वीकार करता है।

– सर्जनशीलता में एक या अधिक सांस्कृतिक तत्वों को अपनाया जा सकता है।

बालकों में सर्जनात्मकता का विकास –

बालकों में सर्जनात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करने के लिए उत्साहनजक वातावरण का निर्माण किया जाना जरूरी है। इसलिए यह अध्यापक के व्यक्तित्व उसके दर्शन और कक्षा के भावात्मक संबंधों पर निर्भर करता है, जिसे वह स्वयं निर्माण करता है। बालकों को सर्जनशील बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वे बिना किसी भय से प्रश्न पूछे। उनको नवीन विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता एवं आवश्यक प्रोत्साहन मिले। विभिन्न कला विधाओं नाटक, चित्रण, खिलौने निर्माण, काल्पनिक सोच इत्यादि द्वारा बालक अपने अनुभवों को अभिव्यक्ति कर सकें।

जरा सोचें, अभी विद्यालयों में बालकों की सर्जनात्मकता की क्या स्थिति है?

शिक्षक के रूप में कार्य करते हुए हमारे दायित्व और भी अधिक इस रूप से बढ जाते है कि हम बच्चों के सर्जनशील मानस व उनमें उपलब्ध ईश्वर प्रदत्त ऊर्जा को पहचान कर उसे न सिर्फ भटकने व कुण्ठित होने से बचाए रख सकते है, वरन सकारात्मक व रचनात्मक दिशा देकर पूरे समाज के लिए भी उपयोगी बना सकते है।

मानव मस्तिष्क पैराशूट की तरह होता है जो खुलने पर ही काम करता है।

संदर्भिका

BIBLIOGRAPHY

1. डॉ. बी.पी. गुप्ता, व डॉ. एच.आर.स्वामीय भारत में आर्थिक पर्यावरण, रमेश बुक डिपो, जयपुर, 2010

2. दत्त एवं सुन्दरम्य भारतीय अर्थव्यवस्था, एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, 2010

3. Charles mitchell; International Business Culture, World trade press, California, 2000.

4. डी.आर. जाट, वी.के. वशिष्ठ, पी.सी. भिण्डा, सरिता जैनय भारत में आर्थिक पर्यावरण, अजमेरा बुक कम्पनी, जयपुर, 2008

5. Prof. Ramesh Chandra; Globalisation, Liberalisation, privatisation and indian polity industry, Isha Books, Delhi 2004.

6- Deepak Nayyar; Trade and Globalization, Oxford University Press, New Delhi, 2008.

7. राकेश कोठारी, वी.एस. राठौर, पी.सी. जैनय अन्तर्राष्ट्रीय विपणन, रमेश बुक डिपो, जयपुर 2008

8. Arun Monappa; Liberlisation and human resource management; Challanges for the corporation of tomorrow, Sage publications, New Delhi, 2004.